International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 09-10-2021, Accepted: 24-10-2021, Published: 10-11-2021
Volume 3, Issue 4, 2021, Page No. 3-7

पुराणों में विष्णु के दशावतार में वराहवतारः एक परिशीलन

कुमुद कुमार पाण्डेय
शोधार्थी, संस्कृत, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
भगवान विष्णु को नारायण हरि अन्य नामों से सम्बोधित किया जाता है। जिनका प्रमुख कार्य है जगत का भरण पोषण एवं संचालन करना है वह युगों–युगों में विभिन्न अवतार धारण करते है विष्णु शब्द की व्युत्पत्ति मुख्यतः विष् धातु से ही मान गयी है यास्काचार्य ने मुख्य रूप से 'विष्' धातु को ही 'व्याप्ति'' के अर्थ में लेते हुए उसे 'विष्णु' शब्द को निष्पन्न बताया है। विष्णुपुराण में कहा गया है उस महात्मा की शक्ति इस सम्पूर्ण विश्व में प्रवेश किये गये। इसलिए वह विष्णु कहलाता है। श्रीमद्भगवतगीता के चतुर्थ अध्याय में सुप्रसिद्ध सातवे एवं आठवें श्लोक में भगवान ने स्वयं अवतार का प्रयोजन बताते है कि जब–जब धन की हानि और अधर्म का उत्थान हो जाता है। तब तक सज्जनों के परित्राण और दुष्टों के विनाश के लिए मैं विभिन्न युगों में (माया का आश्रय लेकर) विभिन्न रूप धारण करता हूँ उसी क्रम में भगवान विष्णु वराहावतार रूप धारण करके महासागर (रसातल) में डुबायी गयी पृथ्वी का उद्वार करते है और हिरण्याक्ष नामक दैत्य का भी वध करते है।

मुख्य शब्दः विष्णु वराह रूप धारण करके पृथ्वी को रसातल से निकालते है।

प्रस्तावना
हिन्दू धर्म में विभिन्न देवताओं के अवतार की मान्यता है। प्रायः विष्णु के दस अवतार माने गये हैं जिन्हें दशावतार हैं इसी तरह शिव और अन्य देवी–देवताओं के भी कई अवतार माने गये हैं।

गोवा के श्री बालाजी मंदिर के कपाट पर दशावतारों का चित्रण है।
भगवान विष्णु हिन्दू त्रिदेवों (तीन महा देवताओं) में से एक हैं। निर्माण की योजना के अनुसार, वे ब्रह्माण्ड के निर्माण के बाद, उसके विघटन तक उसका संरक्षा करते हैं। भगवान विष्णु के दस अवतारों को संयुक्त रूप में 'दशावतार' कहा जाता है। जब मानव अन्याय और अधर्म के दलदल में खो जाता है, तब भगवान विष्णु उसे सही रास्ता दिखाने हेतु अवतार ग्रहण करते हैं। श्रीमद्भगवतगीता में श्रीकृष्ण के द्वारा कहा गया है :

> यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
> अभ्युथानम् अधर्मस्य तदात्मानं सृजनाम्यहम्।।
> परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
> धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे–युगे।।[1]

अर्थात् जब–जब धर्म की हानि और अधर्म का उत्थान हो जाता है, तब–तब सज्जनों के परित्राण और दुष्टों के विनाश के लिए मैं विभिन्न युगों में (माया का आश्रय लेकर) उत्पन्न होता हूँ।
भगवान विष्णु के दस अवतार हैं :[2]

1. मत्स्य
2. कूर्म
3. वराह
4. नरसिंह
5. वामन
6. परशुराम
7. राम
8. कृष्ण
9. बुद्ध
10. कल्कि

वराहावतार भगवान विष्णु के 24 अवतारों में से 16वें अवतार हैं। जब जब धरती पापी लोगों से कष्ट पाती है तब तब भगवान विविध रूप धारण कर इसके दुःख दूर करते हैं। राक्षस हिरण्याक्ष ने जब पृथ्वी को जल में डुबों दिया था तब भगवान विष्णु वराह अवतार लेकर पृथ्वी का कल्याण किया था।
एक बार मरीचि नन्दन कश्यप ने भगवान को प्रसन्न करने के लिए खीर की आहुति दिया और उनकी आराधना समाप्त करके सन्ध्या काल के समय अग्निशाला में ध्यानस्थ होकर बैठे गये। उसी समय दक्ष प्रजापति की पुत्री दिति (यह कश्यप की पत्नी तथा दैत्यों की माता हैं।) कामांतुर होकर पुत्र प्राप्ति की लालसा से कश्यप जी के निकट गयी। दिति ने कहा, ''हे प्रिय! मैं तुम्हें तुम्हारी इच्छानुसार तेजस्वी पुत्र अवश्य दूंगा। किन्तु तुम्हें एक प्रहर के लिए प्रतीक्षा करनी होगी। सन्ध्या काल मे सूर्यास्त के पश्चात् भूतनाथ भगवान शंकर अपने भूत, प्रेत तथा यक्षों को लेकर बैल पर चढ़ कर विचरते हैं। इस समय तुम्हें कामक्रीड़ा में रत देखकर वे अप्रसन्न हो जावेंगे। अतः यह समय सन्तानोत्पत्ति के लिए उचित नहीं है। सारा संसार मेरी निन्दा करेगा। यह समय तो सन्ध्यावन्दन और भगवत् पूजन आदि के लिए ही है। इस समय जो पिशाचों जैसा आचरण करते हैं वे नरकगामी होते हैं।''[3]
पति के इस प्रकार समझाने पर भी उसे कुछ भी समझ में न आया और उस कामातुर दिति ने निर्लज्ज भाव से कश्यप जी के वस्त्र पकड़ लिये। इस पर कश्यप जी ने दैव इच्छा को प्रबल समझ कर दैव को नमस्कार किया और दिति की इच्छा पूर्ण की और उसके बाद शुद्ध जल से स्नान कर के सनातन ब्रह्म रूप गायत्री का जप करने लगे। दिति ने गर्भ धारण कर के कश्यप जी से प्रार्थना की, ''हे आर्यपुत्र! भगवान भूतनाथ मेरे अपराध को क्षमा करें और मेरा यह गर्भ नष्ट न करें। उनका स्वभाव बड़ा उग्र है। किन्तु वे अपने भक्तों की सदा रक्षा करते हैं। वे मेरी बहनोई हैं मैं उन्हें नमस्कार करती हूँ।''[4]

कश्यप जब सन्ध्यावदन आदि से निवृत्त हुये तो उन्होंने पत्नी को अपनी सन्तान के हित के लिये प्रार्थना करते हुये और थर–थर कांपती हुई देखा तो वे बोले, ''हे दिति! तुमने मेरी बात नहीं मानी। तुम्हारा चित्त काम वासना में लिप्त था। तुमने असमय में भोग किया है। तुम्हारे कोख से महा भयंकर अमंगलकारी दो अधम पुत्र उत्पन्न होंगे। सम्पूर्ण लोकों के निरपराध प्राणियों को अपने अत्याचारों से कष्ट देंगे। धर्म का नाश करेंगे। साधू और स्त्रियों को सतायेंगे। उनके पापों का घड़ा भर जाने पर भगवान कुपित होकर उनका वध करेंगे।''[5]

दिति ने कहा, ''हे भगवन्! मेरी भी यही इच्छा है कि मेरे पुत्रों का वध भगवान के हाथ से ही हो। ब्राह्मण के शाप से न हो क्योंकि ब्राह्मण के शाप के द्वारा प्राणी नरक में जाकर जन्म धारण करता है।'' तब कश्यप जी बोले, ''हे देवि! तुम्हें अपने कर्म का अति पश्चाताप है इसलिए तुम्हारा नाती भगवान का बहुत बड़ा भक्त होगा और तुम्हारे यश को उज्वल करेगा। वह बालक साधुजनों की सेवा करेगा और काल को जीतकर भगवान का पार्षद बनेगा।''[6]

कश्यप जी के मुख से भगवतभक्त पौत्र के उत्पन्न होने की बात सुनकर दिति को अति प्रसन्नता हुइ और अपने पुत्रों का वधन साक्षात् भगवान से सुनकर उसका सारा खेद समाप्त हो गया।[7]

उसके दो पुत्र हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकश्यपु का जन्म हुआ और विधि के विधानों के हिसाब से ये दुष्टता की राह पर चल पड़े। ये प्रभु की इच्छा से इनके कुल में प्रह्लाद और बलि जैसे महापुरूषों का जन्म भी हुआ।

जय और विजय बैकुण्ठ से गिरकर दिति के गर्भ में आ गये। कुछ काल के पश्चात् दिति के गर्भ से दो पुत्र उत्पन्न हुये जिनका नाम प्रजापति कश्यप ने हिरण्यकश्यपु और हिरण्याक्ष रखा। इन दोनों यमल के उत्पन्न होने के समय तीनों लोकों में अनेक प्रकार के भयंकर उत्पात होने लगे। स्वर्ग, पृथ्वी, आकाश सभी कांपने लगे और भयंकर आंधियों चलने लगी। सूर्य और चन्द्र पर केतु और राहु बार बार बैठने लगे। उल्कापात होने लगे। बिजलियां गिरने लगी। नदियों तथा जलशयों के जल सूख गये। गायों के स्तनों से रक्त बहने लगा। उल्लू, सियार आदि रोने लगे।[8]

अपनी कोहनी पर भू देवी को उठाए हुए जल से बाहर आ रहे तथा सर्प पर खड़े वाराह भगवान का शिलाचित्र, दिल्ली संग्रहालय मे सुरक्षित है।

दोनों दैत्य जन्मते ही आकाश तक बढ़ गये। उनका शरीर फौलाद के समान पर्वताकार हो गया। वे स्वर्ण के कवच, कुण्डल, कर्द्धनी, बाजूबन्द आदि पहने हुये थे। हिरण्यकश्यपु ने तप करके ब्रह्माजी को प्रसन्न कर लिया। ब्रह्मा जी से उसने वरदान ले लिया कि उसकी मृत्यु न दिन में हो न रात में, न घर के भीतर हो न बाहर। इस तरह से अभय होकर और तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करके वह एक छत्र राज्य करने लगा। उसका छोटा भाई हिरण्याक्ष उसकी आज्ञा पालन करते हुये शत्रुओं का नाश करने लगा। एक दिन घूमते–घूमते वह वरूण की पुरी में जा पहुंचा। पाताल लोक में पहुँचकर हिरण्याक्ष ने वरूण देव से युद्ध की याचना करते हुये कहा, ''हे वरूण देव्! आपने जगत के सम्पूर्ण दैत्यों तथा दानवों पर विजय प्राप्त किया है। मैं आपसे युद्ध की भिक्षा मांगता हूँ। आप मुझसे युद्ध करके अपने युद्ध कौशल का प्रमाण दे। उस दैत्य की बात सुनकर वरूण देव को क्रोध तो बहुत आया पर समय को देखते हुये उन्होंने हंसते हुये कहा, ''अरे भाई! अब लडने का चाव नहीं रहा है और तुम जैसे बलशाली वीर से लडने के योग्य अब हम रह भी नहीं गये हैं। तुमकों तो यज्ञपुरूष नारायण के पास जाना चाहिए। वे ही तुमसे लड़ने योग्य है।[9]

वरूण देव की बात सुनकर उस दैत्य ने देवर्षि नारद के पास जाकर नारायण का पता पूछा। देवर्षि नारद ने उसे बताया कि नारायण इस समय वाराह का रूप धारण कर पृथ्वी को रसातल से निकालने के लिये गये है। इस पर हिरण्याक्ष रसातल में पहुंच गया। वहां उसने भगवान वाराह को अपने दाढ़ पर रखकर पृथ्वी को लाते हुये देखा। उस महाबली दैत्य ने वाराह भगवान से कहा, ''अरे जंगली पशु! तू जल में कहाँ से आ गया है? मूर्ख पशु! तू इस पृथ्वी को कहां लिये जा रहे है? इसे तो ब्रह्मा जी ने हमें दे दिया है। रे अधम! तू मेरे रहते इस पृथ्वी को रसातल से नहीं ले जा सकता। तू दैत्य और दानवों का शत्रु है इसलिए आज मैं तेरा वध कर डालूंगा।''[10]

उदयगिरी की गुफा, विदिष गुप्त साम्राज्य की प्राचीन राजधानी से मिला शिलाचित्र, भगवान वाराह भू देवी को दाँतों पर रखे हुए। एक प्राचीन शिलाचित्र जिसे पत्थर को काटकर अद्वितीय नक्काशीदार मुर्तिकला से बनाया गया था।

हिरण्याक्ष के इन वचनों को सुनकर वाराह भगवान को बहुत क्रोध आया किन्तु पृथ्वी को वहाँ छोड़कर युद्ध करना उन्होंने उचित नहीं समझा और उनके कटु वचनों को सहन करते हुये वे गजरात के समान शीघ्र ही जल के बाहर आ गये। उनका पीछा करते हुये हिरण्याक्ष भी बाहर आया और कहने लगा, ''रे कायर! तुझे भागने में लज्जा नहीं आती? आकर मुझसे युद्ध कर।' पृथ्वी को जल पर उचित स्थान पर रखकर और अपना उचित आधार प्रदान कर भगवान वाराह दैत्य की ओर मुड़े और कहा, ''अरे ग्राम सिंह (कुत्ते)! हम जंगली पशु हैं और तुम जैसे ग्राम सिंहों को ही ढूँढते रहते हैं। अब तेरी मृत्यु सिर पर नाच रही है।'' उनके इन व्यंग वचनों को सुनकर हिरण्याक्ष उन पर झपट पड़ा। भगवान वाराह और हिरण्याक्ष में मध्य भयंकर युद्ध हुआ और अन्त में हिरण्याक्ष का भगवान वाराह के हाथों वध हो गया।[11]

जय और विजय को शाप

एक बार सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार (ये चारों सनकादि ऋषि कहलाते हैं और देवताओं के पूर्वज माने जाते हैं) सम्पूर्ण लोकों से विरक्त होकर चित्त की शान्ति के लिये भगवान विष्णु के दर्शन करने हेतु उनके बैकुण्ठ लोक में गये। बैकुण्ठ के द्वार पर जय और विजय नाम के दो द्वारपाल पहरा दिया करते थे। जय और विजय ने इन सनकादिक ऋषियो को द्वार पर ही रोक लिया और बैकुण्ठ लोक के भीतर जाने से मना करने लगे।

उनके इस प्रकार मना करने पर सनकादिक ऋषियों ने कहा, ''अरे मूर्खों! हम तो भगवान विष्णु के परम भक्त हैं। हमारी गति कहीं भी नहीं रूकती है। हम देवाधिदेव के दर्शन करना चाहते हैं। तुम हमें उनके दर्शनों से क्यों रोकते हो? तुम लोग तो भगवान की सेवा में रहते हो, तुम्हें तो उन्हीं के समान समदर्शी होना चाहिये। भगवान का स्वभाव परम शान्तिमय है, तुम्हारा स्वभाव भी वैसा ही होना चाहिए। हमें भगवान विष्णु के दर्शन के लिये जाने दो।'' ऋषियों के इस प्रकार कहने पर भी जय और विजय उन्हें बैकुण्ठ के अन्दर जाने से रोकने लगे। जय और विजय के इस प्रकार रोकने पर सनकादिक ऋषियों ने क्रुद्ध होकर कहा, ''भगवान विष्णु के समीप रहने के बाद भी तुम लोगों में अहंकार आया है और अहंकारी का वास बैकुण्ठ में नहीं हो सकात। इसलिए हम तुम्हें शाप देते हैं कि तुम लोग पापयोनि में जाओं और अपने पाप का फल भुगतों।'' उनके इस प्रकार शाप देने पर जय और विजय भयभीत होकर उनके चरणों में गिर पड़े और क्षमा माँगने लगे।[13]

यह जानकर कि सनकादिक ऋषिगण भेंट करने आये हैं भगवान विष्णु स्वयं लक्ष्मी जी एवं अपने समस्त पार्षदों के साथ उकने स्वागत के लिये पधारे। भगवान विष्णु ने उनसे कहा, ''हे मुनीश्वरों! ये जय और विजय नाम के मेरे पार्षद हैं। इन दोनों ने अहंकार बुद्धि को धारण कर आपका अपमान करके अपराध किया हैं। आप लोग मेरे प्रिय भक्त है और इन्होंने आपकी अवज्ञा करके मेरी भी अवज्ञा की है। इनको शाप देकर आपने उत्तम कार्य किया है। इन अनुचरों ने ब्रह्मणों का तिरस्कार किया है और उसे मैं अपना ही तिरस्कार मानता हूँ। मैं इन पार्षदों की ओर से क्षमता याचना करता हूँ। सेवकों का अपराध होने पर भी संसार स्वामी का ही अपराध मानता है। अतः मैं आप लोगों की प्रसन्नता की भिक्षा चाहता हूँ।''[14]

भगवान के इन मधुर वचनों से सनकादिक ऋषियों का क्रोध तत्काल शान्त हो गया। भगवान की इस उदारता से वे अति अनन्दित हुये और बोले, ''आप धर्म की मर्यादा रखने के लिए ही ब्राह्मणों को इतना आदर देते हैं। हे नाथ! हमने इन निरपराध पार्षदों को क्रोध के वश में होकर शाप दे दिया है इसके लिये हम क्षमा चाहते हैं आप उचित समझें तो इन द्वारपालों को क्षमा करके हमारे शाप से मुक्त कर सकते हैं।''[15]
भगवान विष्णु ने कहा, ''हे मुनिगणों! मैं सर्वशक्तिमान होने के बाद भी ब्राह्मणों के वचन को असत्य नहीं करना चाहता क्योंकि इससे धर्म का उल्लंघन होता है। आपने जो शाप दिया है वह मेरी ही प्रेरणा से हुआ है। ये अवश्य ही इस दण्ड के भागी हैं। ये तीन जन्म दैत्य योनि को प्राप्त करेंगे और मेरे द्वारा इनका संहार होगा। ये मुझसे शत्रुभाव रखते हुये भी मेरे ही ध्यान में लीन रहेंगे। मेरे द्वारा इनका संहार होने के बाद ये पुनः इस धाम में वापस आ जावेंगे। तब जय विजय का पहला जन्म सतयुग में हिरण्याक्ष और हिरन्यकशिपु के रूप में हुआ और वराहावतार और नरसिंह अवतार में हिरण्याक्ष और हिरन्यकिश्पु का संहार हुआ, त्रेता युग में रावण कुंभकर्ण के रूप में हुआ जिनका संहार श्रीराम द्वारा हुआ अंत में तीसरे जन्म में शिशुपाल दन्तवक्र के रूप में हुआ और श्रीकृष्ण के द्वारा इनका संहार हुआ और ये वापिस श्रीविष्णु के साथ उनके बैंकुठ धाम में आ गए। वराह पुराण में भगवान श्रीहरि के वराह अवतार की मुख्य कथा के साथ अनेक तीर्थ, व्रत, यज्ञ, दान आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। इसमें भगवान नारायण का पूजन–विधान, शिव–पार्वती की कथाएं वराह क्षेत्रवर्ती आदित्य तीर्थों की महिमा, मोक्षदायिनी नदियों की उत्पत्ति और माहात्म्य एवं त्रिवेदी की महिमा आदि पर भी विशेष प्रकाश डाला गया है।

कथा

वराह पुराण में सबसे पहले पृथ्वी और वाराह भगवान का शुभ संवाद है, तदनन्तर और सत्ययुग के वृतान्त में रैम्य का चरित्र है, फिर दुर्जेय के चरित्र और श्राद्ध कल्प का वर्णन है, तत्पश्चात् महातपा का आख्यान, गौरी की उत्पत्ति, विनायक, नागगण सेनानी आदित्यगण देवी धनद तथा वृष का आख्यान है। उसके बाद सत्यतपा के व्रत की कथा दी गयी है, तदनन्तर अगस्त्य गीता तथा रूद्रगीता कही गयी है, महिषासुर के विध्वंस में ब्रह्मा विष्णु रूद्र तीनों की शक्तियों का माहात्म्य प्रकट किया गया है, तत्पश्चात् पर्वाध्याय श्वेतापाख्यान गोप्रदानिक इत्यादि सत्ययुग वृतान्त के प्रथम भाग में दिखाया गया है फिर भगवर्द्ध में व्रत और तीर्थों की कथायें है, बत्तीस अपराधों का शारीरिक प्रायश्चित बताया गया है, प्रायः सभी तीर्थों के पृथक माहात्मय का वर्णन है, मथुरा की महिमा विशेष रूप से दी गयी है, उसके बाद श्राद्ध आदि की विधि है, तदनन्तर ऋषि पुत्र के प्रसंग से यमलोक का वर्णन है, कर्मविपाक एवं विष्णुव्रत का निरूपण है, गोकर्ण के पापनाशक माहात्मय का भी वर्णन किया गया है, इस प्रकार वाराहपुराण का यह पूर्वभाग कहा गया है, उत्तर भाग में पुलस्त्य और पुरूराज के सम्वाद में विस्तार के साथ सब तीर्थों के माहात्मय का पृथक पृथक वर्णन है। फिर सम्पूर्णा धर्मों की व्याख्या और पुष्कर नामक पुण्य पर्व का भी वर्णन है।[17]
धर्म ग्रन्थों के अनुसार भगवान विष्ण ने दूसरा अवतार वराह रूप में लिया था। वराह अवतार से जुड़ी कथा इस प्रकार है– पुरातन समय में दैत्य हिरण्याक्ष ने जब पृथ्वी को ले जाकर समुद्र में छिपा दिया तब ब्रह्मा की नाक से भगवान विष्णु वराह रूप में प्रकट हुए। भगवान विष्णु के इस रूप को देखकर सभी देवताओं व ऋषि–मुनियों ने उनकी स्तुति की। सबके आग्रह पर भगवान वराह ने पृथ्वी को ढूंढना प्रांरभ किया। अपनी थूथनी की सहायता से उन्होंने पृथ्वी का पता लगा लिया और समुद्र के अंदर जाकर अपने दांतों पर रखकर वे पृथ्वी को बाहर ले आए।[18]
जब हिरण्याक्ष दैत्य ने यह देखा तो उसने भगवान विष्णु के वराह रूप को युद्ध के लिए ललकारा। दोनों में भीषण युद्ध हुआ। अंत में भगवान वराह ने हिरण्याक्ष का वध कर दिया। इसके बाद भगवान वराह ने अपने खुरों से जल को स्तंभित कर उस पर पृथ्वी को स्थापित कर दिया। पौराणिक कथा के अनुसार भगवान विष्णु ने पृथ्वी को हिरण्याक्ष नामक दैत्य से बचाया था। हिन्दू मान्यता के अनुसार पौराणिक काल में दैत्य हिरण्याक्ष ने पृथ्वी को समुद्र के गर्भ में छिपा गया था। पृथ्वी को बचाने के लिए भगवान विष्णु ने वराह अवतार लिया और पृथ्वी को ढूढने समुद्र में चले गए। भगवान वराह ने समुद्र के तल में पृथ्वी को ढूंढकर अपने दातों पर उसे उठा लिया। भगवान विष्णु के अवतार वराह पृथ्वी को रसातल से बाहर निकाते है। बाहर आकर वो दैत्य हिरण्याक्ष से युद्ध करते है। भीषण युद्ध के बाद वराह हिरण्याक्ष दैत्य का वध करते है। भक्त प्रहलाद को राक्षस हिरण्यकश्यप से बचाने के लिए भगवान विष्णु ने नरसिंह अवतार लिया था। इस कथा के अनुसार दैत्यों का राजा हिरण्यकश्यप था खुद को भगवान मानता था। हिरण्यकश्यप ने कठिन तप करके ब्रह्मा जी से वरदान मांगा था। वरदान के अनुसार संसार के किसी भी प्राणी, मनुष्य, जीव, पशु, देवता, दैत्य से मेरी मृत्यु ना हो। ना दिन में ना रात में, ना घर के अंदर और न ही घर के बाहर मुझे कोई मार सके। ना कोई मुझे अस्त्र से और शस्त्र से मार सके। ना भूमि पर, ना ही आकाश में, ना पाताल और ना ही स्वर्ग में मुझे कोई मार सकता, इसलिए वो भगवान है।[19]
राक्षस हिरण्यकश्यप का प्रह्लाद नामक एक पुत्र था। वह भगवान विष्णु का परम भक्त था। हिरण्यकश्यप उसके पुत्र प्रह्लाद से नाराज रहता था क्योंकि प्रह्लाद उसकी पूजा ना करके विष्णु की पूजा करता थ। अंत में हिरण्कश्यप ने भक्त प्रह्लाद को मारने का निश्चय किया। उसे जल में डुबोया गया, अस्त्र शस्त्र से मारने का प्रयत्न किया गया, पहाड़ से नीचे गिराया गया, यहां तक कि सारे प्रयत्न नाकाम होने पर हिरण्यकश्यप की बहन होलिका ने मारने की कोशिक की। वो प्रहलाद को लेकर अग्नि में बैठ गयी लेकिन ईश्वर की मर्जी थी कि होलिका जल गयी और प्रह्लाद बच गया।[20]
अब हिरण्यकश्यप ने स्वयं भक्त प्रहलाद को मारने का निश्चय किया। उसने प्रहलाद को महल के एक खंभे में बांध दिया। तभी उस खंभे में से भगवान विष्णु नरसिंह का अवतार लेकर प्रकट होते है। भगवान नरसिंह का रूप कुछ इस तरह था–उनका चेहरा शेर का और धड़ मनुष्य का था। यानी कि ना तो वो मनुष्य थे ना ही पशु थे। नरसिंह अवतार ने हिरण्यकश्यप को पकड़ लिया और अपनी जांघों पर रखकर उसका धड़ फाड़ दिया। इस तरह से भगवान विष्णु ने नरसिंह अवतार लेकर भक्त प्रह्लाद की रक्षा की थी।[21]
हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु ने जब दिति के गर्भ से जुड़वा बच्चों रूप में जन्म लिया, इनके जन्म से पृथ्वी काँप उठी, आकाश में नक्षत्र एवं लोक डोलने लगे, समुद्र में भयंकर लहरें उठने लगीं ऐसा ज्ञात हुआ, मानों जैसे प्रलय का आगमन हो गया हो, इतना भयान का इन दोनों का जन्म लेना, यह दोनो दैत्य जन्म उपरांत ही बड़े हो गए, इनका शरीर वज्र के समान कठोर और विशाल हो गया, दोनों बलवान थे, और संसार में अजेयता और अमरता प्राप्त करना चाहते थे इसलिए हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु दोनों ने ब्रह्माजी को प्रसन्न करने के लिए कठोर तप किया इनकी तपस्या से प्रसन्न हो ब्रह्मा जी ने इन्हें दर्शन दिए वरदान मांगने को कहा, दोनों भाइयों ने यह वर मांगा कि हे प्रभु कोई भी युद्ध में हमें पराजित न कर सके और न कोई मार सके, ब्रह्माजी ने उन्हें यही वरदान देकर अपने लोक चले जाते हैं, ब्रह्मा जी से वरदान पाकर हिरण्याक्ष और भी अधिक उदंण्ड और निरंकुश बन गया, तीनों लोंकों में अपने को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए अनेक अत्याचार करने लगा और तीनों लोकों को जीतने निकल पड़ा वह इन्द्रलाक में पहुंचा देखते ही देखते समस्त इन्द्रलोक पर हिरण्याक्ष का अधिकार हो गया इसके बाद दैत्य हिरण्याक्ष वरूण की राजधानी विभावरी नगरी में पहुंचा और वरूण देव को युद्ध के लिए ललकारा, हिरण्याक्ष के वचन सुनकर वरूण देव क्रोद्धित हुए परंतु अपने क्रोद्ध को हृदय मे

दबाकर शांत भाव मुस्कुराते हुए बोले कि हो सकता है कि तुम महान योद्धा और शूरवीर हो।[22]

परन्तु श्री विष्णु से अधिक नहीं तीनों लोकों में भगवान विष्णु को छोड़कर कोई भी ऐसा नहीं है, जो महान हो अतः उन्हीं के पास जाओं वही तुम्हारे साथ युद्ध कर सकते हैं और तुम्हें पराजित करेंगे, वरूण का कथन सुनकर हिरण्याक्ष अत्यधिक क्रोध्दित होकर भगवान विष्णु की खोज में निकल पड़ता है, देवर्षि नारद से उसे ज्ञात होता है कि भगवान विष्णु इस समय वाराह का रूप धारण कर पृथ्वी को रसातल से निकालने के लिए गये हैं, तब हिरण्याक्ष समुद्र के नीचे रसातल में जा पहुँचा, वहाँ उसने देखा कि वारह अपने दांतों पर पृथ्वी को उठाते हुए जा रहा है, दैत्य, वाराह को असभ्य भाषा में अभद्र वचन कहते हुए पृथ्वी को ले जाने से रोकता है।[23]

हिरण्याक्ष की कटु वाणी को अनसुना करते हुए भगवान विष्णु शांत हो वराह के रूप में दांतों पर धरती को लिए हुए आगे बढ़ते रहते हैं, दैत्य भगवान वराह का पीछा नहीं छोड़ा वह उन्हें निर्लज्ज, कायर, पशु, अधम पापी कहता है किंतु भगवान वाराह पृथ्वी को रसातल से बाहर निकलकर समुद्र के ऊपर स्थापित कर देते है।

वाराह पर अपनी बातों का असर न होता देख हिरण्याक्ष हाथ में लेकर भगवान विष्णु पर प्रहार करता है तब भगवान हिरण्याक्ष के हाथ से गदा छीनकर उसे दूर फेंक देते हैं वह त्रिशूल लेकर भगवान विष्णु को मारने का प्रयास करता है लेकिन शीघ्र ही भगवान वाराह सुदर्शन चक्र द्वारा हिरण्याक्ष के त्रिशूल के टुकड़े–टुकड़ें कर देते हैं भगवान वाराह और हिरण्याक्ष में मध्य भयंकर युद्ध होता है और अन्त में भगवान वाराह के हाथों से हिरण्याक्ष का वध होता है।आपने भगवान विष्णु के वराह अवतार का नाम तो सुना ही होगा जिन्होंने हिरण्याक्ष का वध किया था। लेकिन वे दरअसल आदि वराह थे। आदि वराह से पहले नील वराह और उनके बाद श्वेत वराह हुए जिनके बारे में कम ही लोग जानते होंगे। तीनों के काल को मिलाकर वराह काल कहा गया जो वर्तमान में भी जारी है। नील वराह का अवतरण हिमयुग के अंतिम चरण में जब हुआ जब धरती पर जल ही जल फैलने लगा था और रहने के लिए कोई जगह नहीं बची थी।[24]

नील वराह कालः पाद्यकल्प के अंत के बाद महाप्रलय हुईं। सूर्य के भीषण ताप के चलते धरती के सभी वन–जंगल आदि सूख गए। समुद्र का जल भी जल गया। ज्वालामुखी फूट पड़े। सघन ताप के कारण सूखा हुआ जल वाष्प बनकर आकाश में मेद्यों के रूप में स्थिर होता गया। अंत में न रूकने वाली जलप्रलय का सिलसिला शुरू हुआ। चक्रवात उठने लगे और देखते समस्त धरती जल में डूब गयी। देख ब्रह्मा को चिंता होने लगी, तब उन्होंने जल में निवास करने वाले विष्णु का स्मरण किया और फिर विष्णु ने नील वराह रूप में प्रकट होकर इस धरती के कुछ हिस्से को जल से मुक्त किया।[25]

पुराणकार कहते है कि इस काल में महामानव नील वराह देव ने अपनी पत्नी नयनादेवी के साथ अपनी संपूर्ण वराही सेना को प्रकट किया और धरती को जल से बचाने के लिए तीक्ष्ण दरातों, पाद प्रहारों, फावड़ों और कुदालियों और गैतियों द्वारा धरती को समतल कर रहने लायक बनाया। इसके लिए उन्होंने पर्वतों का छेदन तथा गर्तो के पूरण हेतु मृत्तिका के टीलों में जल में डालकर भूमि को बड़े श्रम के साथ समतल करने का प्रयास किया। यह एक प्रकार का यज्ञ ही था इसलिए नील वराह को यज्ञ वराह भी कहा गया। नील वराह के इस कार्य को आकाश के सभी देवदूत देख रहे थे। प्रलयकाल का जल स्तर कम हो जाने के बाद भगवान के प्रयत्नों से अनेक सुगंधित वन और पुष्कर–पुष्करिणी सरोवर निर्मित हुए वृक्ष, लताएं उग आईं और धरती पर फिर से हरियाली छा गयी। संभवतः इसी काल में मधु और कैटभी का वध किया गया था।[26]

आदि वराहः नील वराह कल्प के बाद आदि वराह कल्प शुरू हुआ। इस कल्प में भगवान विष्णु ने आदि वराह नाम से अवतार लिया। यह वह काल था जबकि दिति और कश्यप के दो भयानक असुर पुत्र हिरण्यकश्यप और हिरण्याक्ष का आतंक था। दोनों को ही ब्रह्मा जी से वरदान मिला हुआ था। इस काल में हिमयुग समाप्ति की ओर चल रहा था।

ऋषि कश्यप की सृष्टि में अर्थात् उनके कुल के विस्तार के समय भगवान विष्णु ने आदि वराह का अवतार लिया आदि वराह को कपिल वराह भी कहा गया है। वराह इसलिए कि उन्होंने वराह जाँति में ही जन्म लिया था। उस काल में वराह अर्थात् वन में रहने वाली जाति होती थी। शोधकर्ताओं के अनुसार कश्यप का क्षेत्र कैस्पियन सागर के पास से कश्मीर तक था। भगवान आदि वराह ने नील वराह के कार्य को ही आगे बढ़ाया था।[27]

हिरण्याक्ष का वधः ऋषि कश्यप का पुत्र हिरण्याक्ष का दक्षिण भारत पर राज था। ब्रह्मा से युद्ध में अजेय और अमरता का वर मिलने के कारण उसका धरती पर आतंक हो चला था। हिरण्याक्ष भगवान वराह रूपी विष्णु के पीछे लग गया था और वह उनके धरती निर्माण के कार्य की खिल्ली उड़ाकर उनको युद्ध के लिए ललकारता था। वराह भगवान न जब रसातल से बाहर निकलकर धरती को समुद्र के ऊपर स्थापित कर दिया, तब उनका ध्यान हिरण्याक्ष पर गया।

आदि वराह के साथ भी महाप्रबल वराह सेना थी। उन्होंने अपनी सेना को लेकर हिरण्याक्ष के क्षेत्र पर चढ़ाई कर दी और विन्ध्यगिरी के पाद प्रसूत जल समुद्र को पार कर उन्होंने हिरण्याक्ष के नगर को घेर लिया। संगमनेर में महासंग्राम हुआ और अंततः हिरण्याक्ष का अंत हुआ। आज भी दक्षिण भारत में हिंगोली, हिंगनघाट, हींगना नदी तथा हिरण्याक्षगण हैंगड़े नामों से कई स्थान हैं।[28]

हिरण्याक्ष के वध के बाद भगवान विष्णु ने नृसिंह अवतार लेकर हिरण्याक्ष के भाई हिरण्यकश्यप का वध किया थ। वराह देव ने दक्षिण के महाराष्ट्र प्रदेश में अपने नाम से एक पुरी भी बसाई जिसमें हिरण्याक्ष के बचे–खुचे दृष्ट असुरों को नियंत्रित रखने के लिए अपनी सेना का एक अंग भी यहां छोड़ दिया। यह पुरी आज वहां बारामी कराड़ के नाम से प्रसिद्ध है। वराह देव कोटि का वर्णन वेदों में भी उपलब्ध है। ऋग्वेद में वराह द्वारा चोरी गयी गयी पृथ्वी का उद्वार तथा विन्ध्या पर्वत को पार करने का वर्णन है। भगवती दुर्गा के रणसंग्राम में अपनी विशाल देव सेनाओं वराही सेना और नारसिंही सेना लेकर उनका स्वयं संचालन करते हुए वियजश्री से विभूषित हुई थी। वराही नारसिंही व भीम भैरव नादिनी कहकर दुर्गाम्बा के रण में इन्हें याद किया गया है।[29]

श्वेत वराहः भगवान श्वेत वराह का युद्ध राजा विमति से हुआ था। इतिहास की दृष्टि से यह घटना अतिमहत्वपूर्ण है। द्रविड़ देश में सुमति नाम का राजा था। वह अपने पुत्रों को राज्य देकर तीर्थयात्रा को निकला। तीर्थयात्रा के भ्रमण में मार्ग में ही कहीं उसकी मृत्यु हो गयी, तब एक दिन महर्षि नारद ने सुमति के पुत्र विमति को जाकर भड़काया कहा–पिता का ऋण उतारे वही पुत्र है।''[30]

विमति ने मंत्रियों से पूछा कि पिता का ऋण कैसे उतरे? मंत्रियों ने कहा, –राजन् आपके पिता जी को तीर्थों ने मारा है, सो तीर्थों को बदलें। राजा ने कहा– तीर्थ तो अगणित है। तब एक मंत्री ने कहा–जो सब तीर्थों की प्रमुख नगरी है, उसी को नष्ट कर दिया जाए।[31]

दक्षिण देश के इस शक्तिशाली राजा ने तब निर्णय किया और उसके निर्णय से उत्तर भारत की तीर्थ नगरी के लोगों में भय व्याप्त हो गया। तब वहां के लोगों ने सलाह–मशविरा करके उत्तरी ध्रुव के बर्फीले इलाके की ओर प्रस्थान किया। वहां के क्षेत्र को उस काल में स्वर्ग या देवलोक कहा जाता था। वहां श्वेतद्वीप पर उनके दर्शन वहां के देवता श्वेत वराह से हुए। श्वेत वराह ने उन विष्णु भक्त प्रजा को अभयदान

दिया और विमति से युद्ध कर सैन्य सहित राजा विमति को पराजित किया।[32]

पुराणों की वंशावली के अनुसार सुमति जैन संप्रदाय के सुमतिनाथ तीर्थकर हैं और वे योगेश्वर ऋषभदेव के पौत्र तथा भरत के पुत्र है। उनका समय शोधिक काल गणना से 8118वि0पू0 है। उल्लेखनीय है कि भगवान नारायण ने अपने भक्त ध्रुव को उत्तर ध्रुव का एक क्षेत्र दिया था। यहीं पर शिव पुत्र स्कंद का एक देश था और यहीं पर नारद मुनि भी रहते थे। उत्तर ध्रुव में कुछ कुरू भी रहते थे और यहीं पर श्वेत वराह नाम की जाति भी रहती थी।

निष्कर्ष

वराह अवतार भगवान विष्णु के 24 अवतरों में से 16 अवतार है जब जब धरती पापी लोगों से कष्ट पाती है तब–तब भगवान विविध रूप धारण करके इसके कष्ट दूर करते है।

संदर्भ सूची

1. श्रीमद् भगवतगीता चतुर्थ अध्याय श्लोक 7 व 8
2. महाभारत शान्तिपर्व 339.104
3. पद्मपुराण उत्तर खण्ड 7–3–8
4. पद्मपुराण उत्तर खण्ड 7–3–10
5. वराह पुराण 4.2
6. लिंगपुराण 2.48.31 / 32
7. श्रीमद्भागवतपुराण
8. वही
9. ऋग्वेद सुबोध भाष्य भाग–2
10. श्रीमद्भागवत पुराण
11. विष्णु सहस्रनाम : सानुवाद शंकर भाष्य संहिता गीता प्रेस गोरखपुर संस्करण 1999
12. वही पृ0 66
13. विष्णुपुराण 3.1.45
14. विष्णु सहस्रनाम : सानुवाद शंकर भाष्य संहिता गीता प्रेस गोरखपुर संस्करण 1999 पृ0 67
15. वही
16. वराहपुराण
17. वही
18. वही
19. श्रीमद्भागवत महापुराण
20. वही
21. वही
22. पद्मपुराण उत्तर खण्ड 257.40.41
23. वही 257.45
24. पद्मपुराण उत्तर खण्ड 257
25. विष्णु पुराण 1.2.23
26. देवीभागवत पुराण 8.6.20
27. पुराण विमर्श बलदेव उपाध्याय
28. वही
29. ऋग्वेद
30. श्रीमद्भागवत महापुराण लो0 वाल गंगाधर तिलक अनुवाद माधवराज अट्ठाइसवा संस्करण 2006
31. गीतगोविन्दम् काव्य : सर्ग 1
32. हिन्दी विश्वकोष प्रथम खण्ड नागरी प्राचारिणी सभा वाराणसी संस्करण 1973।